श्री सत्यनारायण व्रत कथा के पांच अध्याय

प्रथम अध्याय: देवर्षि नारद को भगवान विष्णु का उपदेश

नैमिषारण्य में शौनक आदि ऋषियों ने सूतजी से पूछा कि कलियुग में मनुष्यों के दुःख, दरिद्रता और संकट दूर करने वाला सरल धार्मिक उपाय कौन-सा है। सूतजी ने उन्हें भगवान सत्यनारायण के व्रत की कथा सुनाई।

एक समय देवर्षि नारद पृथ्वी पर भ्रमण कर रहे थे। उन्होंने देखा कि अनेक मनुष्य अपने कर्मों, रोग, गरीबी, चिंता और पारिवारिक दुःखों से पीड़ित हैं। उनका हृदय करुणा से भर गया। वे भगवान विष्णु के धाम पहुंचे और प्रणाम करके बोले, "हे प्रभु, सामान्य मनुष्य ऐसा कौन-सा सरल उपाय करे जिससे उसका जीवन धर्मपूर्ण बने और वह दुःखों से ऊपर उठ सके?"

भगवान विष्णु ने कहा, "हे नारद, सत्यनारायण व्रत एक सरल और मंगलकारी व्रत है। जो मनुष्य श्रद्धा, सत्य और भक्ति के साथ मेरी पूजा करता है, कथा सुनता है और प्रसाद बांटता है, वह मेरे प्रति भक्ति प्राप्त करता है तथा उसके जीवन में मंगल का मार्ग खुलता है।"

भगवान ने बताया कि यह व्रत पूर्णिमा, संक्रांति या किसी भी शुभ अवसर पर किया जा सकता है। भक्त अपनी सामर्थ्य के अनुसार फल, फूल, दूध, घी, गुड़ या चीनी, गेहूं अथवा अन्य उपलब्ध सामग्री से प्रसाद बनाकर अर्पित कर सकता है।

पूजा के बाद परिवार और ब्राह्मणों अथवा उपस्थित लोगों के साथ कथा सुननी चाहिए और प्रसाद सम्मानपूर्वक बांटना चाहिए। व्रत का आधार दिखावा या धन नहीं, बल्कि सत्य, श्रद्धा और शुद्ध भावना है।

प्रथम अध्याय की शिक्षा: सच्ची श्रद्धा और सत्यपूर्ण जीवन किसी भी बाहरी वैभव से अधिक महत्वपूर्ण हैं।

द्वितीय अध्याय: निर्धन ब्राह्मण और लकड़हारे की कथा

प्राचीन काल में काशी नगर में एक निर्धन ब्राह्मण रहता था। वह प्रतिदिन भिक्षा मांगकर अपना जीवन चलाता था। अनेक प्रयासों के बाद भी उसकी गरीबी और चिंता समाप्त नहीं होती थी।

भगवान सत्यनारायण ने वृद्ध ब्राह्मण का रूप धारण करके उससे पूछा, "तुम इतने दुखी होकर प्रतिदिन कहां जाते हो?" निर्धन ब्राह्मण ने अपनी परिस्थिति बताई। तब वृद्ध ने उसे सत्यनारायण व्रत की विधि समझाई और कहा कि वह अपनी सामर्थ्य के अनुसार भगवान की पूजा करे।

अगले दिन ब्राह्मण ने निश्चय किया कि भिक्षा में जो कुछ मिलेगा, उससे भगवान की पूजा करेगा। उस दिन उसे सामान्य से अधिक भिक्षा मिली। उसने पूजा सामग्री जुटाई, अपने परिजनों और आसपास के लोगों को बुलाया तथा श्रद्धापूर्वक सत्यनारायण व्रत किया।

व्रत के प्रभाव से उसका जीवन धीरे-धीरे सुधरने लगा। उसने प्राप्त सुख-सुविधाओं को केवल अपना परिश्रम न मानकर भगवान की कृपा समझा और नियमित रूप से व्रत करता रहा।

एक दिन एक लकड़हारा ब्राह्मण के घर आया। उसने पूजा होते देखी और पूछा कि यह कौन-सा अनुष्ठान है। ब्राह्मण ने उसे सत्यनारायण व्रत का महत्व बताया।

लकड़हारे ने संकल्प किया कि उस दिन लकड़ी बेचकर मिलने वाली आय से पूजा करेगा। नगर में उसकी लकड़ी अच्छे मूल्य पर बिक गई। उसने फल, केला, दूध, घी और अन्य सामग्री खरीदी तथा परिवार सहित व्रत किया। उसके जीवन में भी संतोष और समृद्धि बढ़ी।

द्वितीय अध्याय की शिक्षा: भगवान की पूजा धन से नहीं, श्रद्धा और सामर्थ्य के अनुसार किए गए सच्चे प्रयास से पूर्ण होती है।

तृतीय अध्याय: राजा उल्कामुख और साधु वैश्य का संकल्प

एक समय राजा उल्कामुख अपनी पत्नी के साथ नदी के तट पर सत्यनारायण भगवान की पूजा कर रहे थे। राजा धर्मप्रिय था और अपनी प्रजा का पालन करता था।

उसी समय साधु नाम का एक धनी वैश्य वहां पहुंचा। उसने राजा को पूजा करते देखा और व्रत का कारण पूछा। राजा ने बताया कि वह भगवान सत्यनारायण की पूजा पारिवारिक मंगल और संतान प्राप्ति के लिए कर रहा है।

साधु वैश्य और उसकी पत्नी लीलावती के कोई संतान नहीं थी। वैश्य ने मन ही मन संकल्प किया कि यदि उसके घर संतान होगी तो वह सत्यनारायण व्रत करेगा। कुछ समय बाद उनके घर एक सुंदर कन्या का जन्म हुआ, जिसका नाम कलावती रखा गया।

समय बीतता गया, लेकिन वैश्य अपना संकल्प टालता रहा। लीलावती ने उसे कई बार व्रत की याद दिलाई। उसने कहा कि कन्या के विवाह के समय पूजा करेगा। कलावती बड़ी हुई और उसका विवाह एक योग्य युवक से कर दिया गया, फिर भी वैश्य ने व्रत नहीं किया।

कुछ समय बाद साधु वैश्य अपने दामाद के साथ व्यापार करने दूसरे नगर गया। वहां भगवान की माया से उन पर चोरी का झूठा आरोप लगा और राजा चंद्रकेतु ने दोनों को कारागार में डाल दिया। उनका व्यापारिक धन और सामान भी राजकोष में जमा कर लिया गया।

उधर लीलावती के घर भी कठिनाइयां आने लगीं। धन-संपत्ति कम हो गई और भोजन की समस्या होने लगी। एक दिन कलावती ने किसी घर में सत्यनारायण व्रत होते देखा। वह कथा सुनकर प्रसाद लेकर घर लौटी और अपनी माता को व्रत की याद दिलाई।

लीलावती को अपने पति का भूला हुआ संकल्प याद आया। उसने अपनी सामर्थ्य के अनुसार भगवान सत्यनारायण की पूजा की और क्षमा मांगी।

भगवान ने राजा चंद्रकेतु को स्वप्न में दर्शन देकर कहा कि साधु वैश्य और उसके दामाद को मुक्त कर दिया जाए। राजा ने सुबह दोनों को आदरपूर्वक मुक्त किया और उनका धन लौटाया।

तृतीय अध्याय की शिक्षा: भगवान के सामने लिया गया संकल्प बार-बार टालना उचित नहीं है। सफलता और व्यस्तता के बीच अपने वचन को नहीं भूलना चाहिए।

चतुर्थ अध्याय: असत्य बोलने और प्रसाद की उपेक्षा का परिणाम

कारागार से मुक्त होने के बाद साधु वैश्य और उसका दामाद अपने नगर की ओर लौटने लगे। उनके जहाज में व्यापार का बहुत-सा धन और सामान था।

भगवान सत्यनारायण एक संन्यासी के रूप में उनके पास आए और पूछा कि जहाज में क्या है। धन के अहंकार में वैश्य ने सत्य छिपाकर कहा, "इसमें केवल पत्ते और लताएं हैं।"

भगवान ने कहा, "तुम्हारा कथन सत्य हो।" जब वैश्य जहाज पर पहुंचा तो उसका सारा बहुमूल्य सामान वास्तव में पत्तों और बेलों जैसा हो गया था। वह दुखी होकर संन्यासी के पास लौटा और समझ गया कि असत्य बोलने के कारण ऐसा हुआ है।

उसने भगवान से क्षमा मांगी और सत्यनारायण व्रत करने का संकल्प दोहराया। भगवान ने उस पर दया की और उसका सामान फिर पहले जैसा हो गया।

जब जहाज नगर के पास पहुंचा तो वैश्य ने संदेश भेजा कि वह लौट आया है। उस समय लीलावती और कलावती सत्यनारायण भगवान की पूजा कर रही थीं। कलावती अपने पति से मिलने की उत्सुकता में कथा और पूजा के बाद प्रसाद ग्रहण किए बिना ही दौड़ पड़ी।

भगवान की माया से उसका पति और जहाज दिखाई देना बंद हो गया। दुखी होकर उसने अपनी माता से पूछा। लीलावती ने कहा कि वह प्रसाद ग्रहण करना भूल गई है। कलावती वापस गई, भगवान को प्रणाम किया और श्रद्धापूर्वक प्रसाद ग्रहण किया। इसके बाद उसका पति और जहाज सुरक्षित दिखाई देने लगे।

साधु वैश्य ने परिवार सहित विधिपूर्वक सत्यनारायण व्रत किया और जीवनभर भगवान के प्रति कृतज्ञ रहा।

चतुर्थ अध्याय की शिक्षा: असत्य, अहंकार और प्रसाद का अनादर मनुष्य को प्राप्त सुख से भी दूर कर सकते हैं।

पंचम अध्याय: राजा तुंगध्वज की कथा

राजा तुंगध्वज शक्तिशाली और समृद्ध था, लेकिन उसमें अपने पद का अभिमान था। एक दिन वह जंगल में शिकार करने गया। वहां उसने कुछ ग्वालों को भगवान सत्यनारायण की पूजा और कथा करते देखा।

ग्वालों ने राजा को सम्मानपूर्वक बुलाया और प्रसाद दिया, लेकिन राजा ने अहंकार के कारण न तो भगवान को प्रणाम किया और न ही प्रसाद ग्रहण किया। वह वहां से चला गया।

इसके बाद राजा के जीवन में कठिनाइयां आने लगीं। उसका धन, राज्य और पारिवारिक सुख कम होने लगा। उसने विचार किया कि उससे कौन-सी भूल हुई है। उसे ग्वालों की पूजा और अपने अहंकारपूर्ण व्यवहार की याद आई।

राजा वापस उसी स्थान पर गया। उसने भगवान सत्यनारायण से क्षमा मांगी, ग्वालों का सम्मान किया और प्रसाद ग्रहण किया। इसके बाद उसने परिवार सहित सत्यनारायण व्रत किया।

भगवान की कृपा से राजा का जीवन फिर व्यवस्थित हुआ। उसने समझा कि भगवान की भक्ति में राजा और सामान्य व्यक्ति का भेद नहीं है। सच्ची श्रद्धा, विनम्रता और प्रसाद का सम्मान सभी के लिए समान रूप से आवश्यक हैं।

पंचम अध्याय की शिक्षा: पद, धन और शक्ति का अहंकार मनुष्य को भगवान तथा सामान्य भक्तों का सम्मान करने से रोक सकता है।

श्री सत्यनारायण व्रत कथा के पांच अध्याय